स्वामी प्रितम मुनिजी

योगिनामपि सर्वेषा मद्गतेनान्तरात्मना। श्रद्धावान्भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः।।

संपूर्ण योगियों में भी जो श्रद्धावान् भक्त मुझ में तल्लीन हुए मन से मेरा भजन करता है, वह मेरे मत से सर्वश्रेष्ठ योगी है।

भारत भूमि में युगों – युगों से अनेक संत, महात्मा, योगीपुरुष अवतरित होते रहें है और समाज को सत्य, धर्म एवं योगपथ पर आगे बढ़ाने हेतु मार्गदर्शन करते रहें है। 14 फरवरी 1977 में माघ मास की कृष्ण एकादशी और सोमवार को सुबह 6:00 बजे गुजरात के अंतर्गत सरसण गाँव में अवतरित हुए पूर्व जन्म के योगी ऐसे पूज्य प्रितम मुनिजी बचपन से ही धर्म, कर्म, संस्कृति और योग–ज्ञान की निधि प्राप्त किये हुए है। उम्र बढ़ने के साथ उनमें ज्ञान और साधना स्वयं विकसित होने लगे। बचपन से ही उन्हों ने तय कर लिया था कि मुझे संन्यासी बनकर योगसाधना के साथ सनातन संस्कृति प्रसार करना है।

उन्होंने प्रथम बार 1989 में गृहत्याग किया और एक रात्रि देवीमाँ के मंदिर में भावमय ध्यानावस्था में अकेले बैठे रहें। उस रात्रि उनको दो प्रकाशित शरीरधारी योगीयों ने दर्शन दिये। दोंनो ने परस्पर कुछ चर्चा की और बाद में एक पतली और लंबी काया वाले तेजस्वी योगी ने उनकी जिम्मेदारी स्वीकार की और दोंनो आर्शीवाद देकर अंर्तध्यान हो गये। इसके बाद उनके जीवन में अदृश्य मार्गदर्शन, सहयोग और संरक्षण का अनुभव होता रहा। उन्होंने अपने जीवन में घट रही दैवी घटनाओं के बारे में मौन रहना पसंद किया। फरवरी 1993 में पुनः गृहत्याग कर वह गिरनार पर्वत की ओर चले गये। वहाँ से वापस लौटकर उन्होंने "सनातन संस्कृति पुनरुत्थान" के विश्व व्यापी कार्य को ध्यान में रखकर निवृत्ती–प्रवृत्ती पक्ष की दीक्षा, साधना एवं सनातन संस्कृति पुनरुत्थान का वैश्विक कार्य करने की पूर्ण योजनाओं को शब्दस्थ किया।

उन्होंने करीब 16 वर्ष की आयु में अपने जीवन के कार्य को लगभग 100 पृष्ठो में लिपिबद्ध किया। जिस में कार्य का उद्देश्य – विश्व में सनातन संस्कृति पुनरुत्थान। कार्यकर्ताओं को निवृत्ति पक्ष (साधु) और प्रवृत्ति पक्ष (गृहस्थी) क्रमशः दीक्षा विधियाँ, साधना प्रशिक्षण, कार्य की जिम्मेदारियाँ लिपिबद्ध की। जीवसृष्टि और प्रकृति के संवर्धन, संरक्षण का आयोजन निर्णित किया। भौतिक विद्या, मनोविज्ञान और अध्यात्म विज्ञान के सामान्य, मध्यम और उत्तम मुमुक्षुओ के लिए उस प्रकार के साहित्य और प्रशिक्षण व्यवस्था का आयोजन निश्चित किया। विश्व में सदीयों – सहस्त्रों वर्षो तक सनातन संस्कृति कार्य संचालित होता रहे ऐसे संस्थानो की व्यवस्था कर विश्व में शांति, नीति, एकता और धर्म स्थापना का कार्य करने आवश्यक अनेक कार्यो का आयोजन विस्तार से लिपिबद्ध किया। उनकी भौतिक शिक्षा में आगे बढ़ने की इच्छा नहीं थी। किंतु माता–पिता की इच्छा के कारण उन्होंने

विज्ञान शाखा में स्नातक की पदवी प्राप्त की और साथ में ही शास्त्र अध्ययन भी किया। उन्होंने हिमालय, गिरनार, आबु इत्यादि पर्वतों की और गंगा, यमुना, तापी, मही, नर्मदा, इत्यादि नदियों के तटवर्ती कुछ स्थानों की यात्रा की। उनके गुरु भगवान शिवजी के परम अनुग्रह से उनको समय-समय पर प्रेरणा, मार्गदर्शन और संरक्षण प्राप्त होता रहा। ई.स 1989 में उन्होंने प्रथम बार गृहत्याग किया और वापस आने के बाद स्कूली अभ्यास के साथ साथ स्वाध्याय भी बढ़ता रहा। उन्होंने उस समय वेद, भगवद् गीता, श्रीमद भागवत, महाभारत, रामायण, पुराणो, योगग्रंथो, तंत्रमंत्र ग्रंथो, रसविद्या, आयुर्वेद, ज्योतिष, वास्तु, कर्मकांड शास्त्र, दर्शन शास्त्र, इतिहास, विज्ञान, टेकनोलोजी का गहन अध्ययन किया। इसके साथ ही उन्होंने युवाकाल की शुरुआत में ही बिध बिध भोजन बनाना, खेतीकार्य, चित्रकला, संगीत, गायन, वादन, नृत्य, शस्त्रविद्या, काव्यरचना, गौ दूग्ध दूहना, आर्किटेक, चिनाई काम, वक्तव्य कला ईत्यादि सीख लिया। राज काज संचालन उन में बालपन से सहज विकसित था। स्वयं सरल होने के बावजूद उत्तम अनुशासक के गुण धारण किये हुए शांत स्वभाव के स्नेहवान होने के उपरांत सुख दु:ख भावना के व्यवहार से मुक्त थे। इस प्रकार वो बालपन से ही संन्यासी बन विश्व में सनातन संस्कृति प्रसार के लिए आयोजन बद्ध तैयारी करने लगे थे। युवावस्था में "प्राणविद्या" का नित्य तकरीबन 10 घंटे अभ्यास किया करते थे। योग शास्त्रों में वर्णित क्षमताएँ, परिणाम उनमें पूर्वाश्रम से ही विकसित होने लगे थे। उन्होंने प्रभुप्रेम की लगन से संन्यस्त हेतु परिवारजनो की सहमति और आशीर्वाद के साथ 27 नवम्बर 2003 के दिन गृहत्याग किया। उन्हें भगवान शिवजी के 28 वें अवतार लकुलीशजी के शिष्य पूज्य कृपालु मुनिजी (बापुजी) के शिष्य पूज्य सुचरीत मुनिजी और पूज्य राजर्षि मुनिजी के द्वारा क्रमश: दिनांक 16 फरवरी 2004 और 27 फरवरी 2009 को संन्यस्त दीक्षा और "स्वामी प्रितम मुनि" संन्यासी नाम की प्राप्ति हुई।

पूज्य प्रितम मुनिजी संन्यास दीक्षा के उपरान्त मसूरी के पास हिमालय की पहाड़ी, नमर्दा तटवर्ती कंजेठा गाँव स्थित आश्रम और देहरादून के निकटवर्ती आश्रम में एकान्तवास व योग साधना में पांच वर्ष (फरवरी 2004 से मई 2009) तक साधनारत रहे। जनवरी 2007 की एक शाम को करीब 5:30 बजे में उनके गुरु भगवान लकुलीशजी ने उनको ध्यानावस्था में दर्शन दिये। भगवान लकुलीशजी शिवजी के अड्ठाईसवे योगीश्वर अवतार है। पूज्य प्रितम मुनिजी ने भगवान लकुलीशजी को "विश्व में सनातन संस्कृति पुनरुत्थान" कार्य को विश्वव्यापी बनाने का वचन दिया।

27 मई 2009 को अपने सभी आत्मीयजनों को प्रेम और आशीर्वाद देकर अपने गुरु भगवान शिवजी का आदेश न मिलने तक पुन: मानव बस्ती में न आने के निर्णय के साथ हिमालय के ऊपरी पर्वतों में चले गये। जुलाई 2009 में हिमालय से वापस आने पर भगवान "लकुलीशजी" की गुरु परम्परा के वर्तमान आध्यात्मिक गुरु पूज्य श्री राजर्षि मुनिजी ने "भगवान लकुलीशजी" से प्राप्त हुए आध्यात्मिक दीक्षाओं के अधिकार पूज्य प्रितम मुनिजी को प्रदान किए और "भगवान लकुलीशजी"

ने सनातन संस्कृति पुनरुत्थान का कार्य सन् 1956 में पूज्य कृपालु मुनिजी को और 1993 में स्वयं को (पूज्य राजर्षि मुनिजी को) सौंपा था उसे आगे बढ़ाने का आदेश दिया। इस तरह जनवरी 2007 में "भगवान लकुलीशजी" के ध्यानावस्था में दर्शन से परोक्षरूप से मिला हुआ आदेश करीबन ढाई साल की अवधि में प्रत्यक्ष रुप से पूर्ण हुआ। पूज्य प्रितम मुनिजी ने "भगवान लकुलीशजी" के अनुग्रह से पृथ्वी पटल पर सनातन संस्कृति पुनरुत्थान कार्य का विस्तार करने को अपना जीवन कार्य और पूर्णयोग साधना अर्थात पंचतत्वो के बंधनों से मुक्त कर त्रिकालज्ञ अजर-अमर बनाने वाली पूर्णयोग की साधना को जीवन साधना बना लिया। उन्होंने भारत के २२ राज्यों में और मोरिशयस, न्यूजीलैंन्ड, ऑस्ट्रेलिया, ईग्लेंड, यु.ए.ई., नेपाल देशो में यात्रा कर "सनातन संस्कृति पुनरुत्थान" के लिए अथक प्रयत्न किया।

पूज्य प्रितम मुनिज ने "भगवान लकुलीशजी" के शिव संकल्प "सनातन संस्कृति पुनरुत्थान" को विश्व व्यापी बनाने के लिए सितम्बर 2010 में भारत देश की राजधानी दिल्ली से "लकुलीश सनातन संस्कृति प्रबोधन" नाम से संस्था का गठन किया और भारत देश के गुजरात राज्य के वडोदरा ज़िला के अंतर्गत सिद्धक्षेत्र कायावरोहण में "लकुलीशधाम" नाम से मुख्यालय की स्थापना की। जहाँ से विश्व के 240 देशो में सनातन संस्कृति पुनरुत्थान कार्य के विस्तार का 1100 वर्ष का आयोजन किया गया। पूज्य प्रितम मुनिजी कहते है, "धर्मविद्या, अध्यात्मविद्या केवल बाते, कथावार्ता या कर्मकांड का विषय नहीं किंतु आचरण में लाने और धारण करने की विद्या है। योगविद्या अध्यात्म विज्ञान की प्रयोगात्मक सनातन विद्या है जो जीव को शिव रूप बनाती है, जीव को जन्म मृत्यु के बन्धन से मुक्त कर त्रिकालज्ञ, अजर-अमर, दिव्य शरीरी बनाने वाली विद्या है।"

पूज्य प्रितम मुनिजी के जीवनकार्य को थोड़े शब्दो में व्यक्त करें तो निष्काम प्रभु प्रेम, जरुररमंद की सेवा, पृथ्वी पटल पर सनातन संस्कृति पुनरुत्थान का विश्वव्यापी नेतृत्व और जरा, रोग, मृत्यु, रहित दिव्यदेह प्राप्त कराने वाली योग साधना।